हिन्दी तेरे रूप अनेक

- **आशीष बनर्जी**
संदेशवाहक

संस्कृत की पुत्री के रुप में जन्मी हिन्दी कहीं ग्लोबलाईजेसन की आड़ में पश्चिमी सभ्यता के आगोस में तो नहीं आ गई है? आज की हिन्दी आखिर कैसी है? क्या इसने भी अपनी प्लास्टिक सर्जरी तो नहीं न कराली है? आधुनिकीकरण की हवा ने कहीं इसे भी मोडेलिंग का दरवाजा तो नहीं न दिखा दिया है, इत्यादि बातों पर अनायास ही मेरा ध्यान गया और परिणाम स्वरुप इसका हाल-चाल जानने हम आ गए उस मुकाम पर जिसकी परिणति होती है उस परिचर्चा के रुप में जो आपके सम्मुख प्रस्तुत है.

जब हम हिन्दी के इतिहास पर अपनी दृष्टि डालते हैं, तो पाते हैं, कि आदि काल से समय -समय पर कवियों लेखको द्वारा प्रयुक्त की गई हिन्दी की बदलती परिस्थितियों एवं इसके कायाकल्प जो कभी भी एकसार नहीं रहे तथा इसके बदलते स्वरुप ने हमें सर्वदा ही आकर्षित किया है. मुझे लगता है कि हिन्दी ने अपने आप को अनेकों रुपों में प्रस्तुत किया है तथा हिन्दी के विभिन्न कवियों एवं लेखकों ने इसे समय समय पर जो श्रृंगार दिया है और जिस तरह अलंकृत किया है वह वास्तव में अभूतपूर्व है.

यह आम धारणा है और केन्द्रीय प्रतिष्ठानों में हिन्दी को बढावा देने के लिए कतिपय यह स्लोगन दिया जाता है कि हिन्दी सरल है तथा हिन्दी में काम करना आसान है प्रारम्भ तो कीजिए फ़िर देखिए कि अन्य भारतीय भाषाओं की अपेक्षा इसका प्रयोग कितना आसान है अहिन्दी भाषी क्षेत्र - `बंगाल´ से मेरा संबन्ध रहा. बंगाली मेरी मातृभाषा रही परन्तु भारत के हिन्दी भाषी क्षेत्र रुड़की ने हमें अपनी आजीविका का कर्म क्षेत्र दिया. यहां आकर अपना कार्यभार ग्रहण करने के पश्चात् जब मेरा साक्षात्कार जिस हिन्दी में हुआ उससे मुझे लगा कि हिन्दी सीखना वास्तव में आसान है और इसमें काम करना बहुत सरल. परन्तु मुझे यह बात हमेशा खटकती रही है कि भारतवर्ष के आजाद हुए लगभग पांच दशक व्यतीत हो चुके हैं और जिस हिन्दी ने स्वाधीनता की लडाई में सम्पर्क भाषा के रुप में काम करके कश्मीर से कन्याकुमारी तक जनसाधारण को एक जुट करने में महान योगदान दिया तथा जो मिसाल कायम की, वह अभूतपूर्व थी. गुरूदेव रविन्द्रनाथ टैगोर से लेकर महान स्वतन्त्रता सेनानी सुभाष चन्द्र बोस ने सम्पर्क भाषा के रुप में इसके गुणों का बखान किया है तथा इसके मूल्यों की पहचान की है. स्वतंत्रता के बाद भारत की संविधान सभा ने इसे सम्मान देकर राजभाषा के रुप में अपनाया. क्या यह वही हिन्दी थी, जो हिन्दी के महान पंडित श्री बालकृष्ण भट्ट, महादेवी वर्मा अथवा फ़णिश्वरनाथ रेणु ने अपनी कृतियों में प्रयुक्त की अथवा जिसे महाकवि कबीर, तुलसी या सूर ने अपनाया ? भारतेन्दु से लेकर महाकवि धूमिल तक की इसने काव्य यात्रा की तथा उत्तर-प्रदेश, मध्य-प्रदेश, राजस्थान, गुजरात, पंजाब, जम्मू एवम् कश्मीर, हिमाचल ,उत्तरांचल तथा बिहार प्रातों में बहुतायत से बोली एवम् समझी जाती है, क्या यह वही हिन्दी है ?

यह विडम्बना ही कहेंगे कि अभी तक हम इसे आत्मसात नहीं कर पाए हैं. हम इसे राजभाषा के रुप में सिद्धांत्तः स्वीकार तो करते हैं, परन्तु आंग्ल भाषा के वर्चस्व को भुला नहीं पाए हैं. जिसका प्रमाण यह है कि आज गली-कूचों में अंग्रेजी मीडियम स्कूल कालेजों की इतनी मांग बढी है कि इसने एक उद्योग का रुप ले लिया. सरकारी खर्चे से संचालित प्राईमरी स्कूलों के बन्द होने की नौबत आ गई. इन्हें आज दकियानूसी अथवा गरीब छात्रों के स्कूलों की संज्ञा दी जाती है. इस कलुषित मानसिकता ने इंग्लिश के प्रति एक नये आकर्षण का सूत्रपात किया है. परिणाम सामने है. आज की स्थिति यह है कि हम हिन्दी तो छोड़िए अन्य भारतीय

भाषाओं को भी भुलाते जा रहे हैं. आज हम अपने नौनिहालों को इंग्लिश के 'राईम्स' याद कराते एवं सुनते हुए नहीं थकते हैं, इसमें हमे गर्व का अनुभव होता है. इससे हम अपने आपको आधुनिक की संज्ञा देते हैं. आखिर दें भी तो क्यों नहीं. वह हिन्दी दिखाई नहीं देती जिसे हम मानक हिन्दी की संज्ञा दे सकें. मानक शब्दकोष भी बाजार में उपलब्ध नहीं है, यदि कोई है तो इसमें प्रयुक्त अनेकों शब्द ऐसे मिल जाएंगे, जो प्रयोग की दृष्टि से या तो कठिन माने जाते हैं या कालातीत हो चुके हैं, और प्रचलन में नहीं हैं. क्या आज की प्रचलित अखबार, सिनेमा, खड़ी बोली, ब्रज, बुन्देलखण्ड़ी,अवधी, भोजपुरी अथवा गुजरात, पंजाब, राजस्थान या उर्दूनिष्ठ या बम्बईया लहजे में बोली जाने वाली हिन्दी को आप मानक हिन्दी कहेंगे ? लद्दाख से लेकर कन्याकुमारी व इंदिरा प्वाइंट तक तथा गुजरात से लेजर नागालैड़ व अरुणाचल प्रदेश तक एवं हिन्दू, सिख, ईसाई, मुस्लिम, पारसी, बुद्ध, जैन में तथा भारत के अनेको पडोसी देशों एवं संबन्धित महानगरों जैसे मास्को से लेकर वाशिंग्टन, फ़ीजी, मारिशस, सूरीनाम, ट्रीनीडाड में हिन्दी अपने विविध रुपों में प्रयुक्त की जा रही है. निश्चय ही इस प्रसंग को हल करना सरल नही है, चाहे हिन्दी वर्तनी सीखना और सीखकर कार्यालयों में काम करना कितना ही आसान क्यों न हो.

भाषा को अंगीकार करने एवं आत्मसात करने के किए यह आवश्यक है कि हम इसे उन्मुक्त कर दें, व्याकरण के कठिन बंधन से, टोकाटोकी पर पूर्णविराम लगाए तथा ऐसी हिंदी के विकास में अपना योगदान कर सकें जिसमें रश्मी तौर पर अन्य भाषाओं के शब्द प्रचुरता से मिलते हों तथा इनके अनुप्रयोगों में कोई बाधा न हो तभी यह जनसामान्य की भाषा बनकर समस्त भारत के कल्याण में अपना बहुमुखी योदान कर सकेगी. इति विचारम्.

* * * * *